Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 7.671
January to March 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLV

साहित्य मे स्त्री विमर्श की आवश्यकता

डॉ. सरला पण्ड्या *

* कार्यवाहक प्राचार्य (हिन्दी) हरिदेव जोशी राजकीय कन्या महाविद्यालय, बाँसवाड़ा (राज.) भारत

प्रस्तावना – समकालीन महिला लेखिकाओं में उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, मृदुला गर्ग, मंजुला भगत, नासिरा शर्मा, प्रभा खेतान, कृष्णा अग्निहोत्री एवं ममता कालिया का महत्वपूर्ण स्थान है। आठवें दशक की इन महिला उपन्यासकारों की लेखन शैली में भावुकता के स्थान पर तर्क, विचार, बुद्धि, सुक्ष्म अन्वेषण, विश्लेषण व रचनात्मक दृष्टिकोण दिखाई देता है। व्यक्ति और समाज के बदलते संबंधों, तनावपूर्ण जीवन शैली, व्यक्ति के अंत: संघर्ष से उत्पन्न द्वन्द्वात्मक स्थिति के साथ ही सामयिक जीवन संदर्भों के परिप्रेक्ष्य में स्त्री विकास की अनेक संभावनाओं को उजागर किया है। उन्होंने स्त्री की बदलती भूमिका व उसके सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलुओं पर चिंतन भी किया है। इन लेखिकाओं ने समाज की परिस्थितियों को देखा व अनुभव किया है इसके पश्चात् ही उसे साहित्य रचना में उतारा है।

'मार्क्स की अवधारणा है कि 'मनुष्य की चेतना उसकी परिस्थितियों का निर्धारण नहीं करती अपितु परिस्थितियाँ ही चेतना का निर्धारण करती है।' साहित्य लेखन में सर्वाधिक महत्व चेतना का है जिसका निर्धारण उस समाज की विभिन्न परिस्थितियाँ करती है।'[1]

महिला उपन्यासकारों ने स्त्री विमर्श के सभी पहलुओं –स्त्री के प्रति शोषण, स्त्री आंदोलन, स्त्री और आधुनिकता, औरत की परिवर्तित आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक स्थितियाँ, मूल्य विसंगतियाँ व स्वायत्ताता, स्त्री व भूमंडलीकरण, स्त्री अस्मिता, साँस्कृतिक परिवर्तन, स्त्री आरक्षण आदि बहुआयामी एवं वैविध्यपूर्ण विषयों के साथ साहित्य रचना की है। आपका बंटी, नरक दर नरक, उसके हिस्से की धूप, प्रतिध्वनियाँ, टेसू की टहनियाँ आदि रचनाएँ इसी यथार्थबोध को व्यक्त करती है। इसी प्रकार नारी अस्मिता को व्यक्त करने वाली रचनाएँ सुरजमुखी अंधेरे के, रेत की मछली, अचला एक मन: स्थिति, बात एक औरत की भी लिखी गई है। हजारी प्रसाद द्विवेदी– 'यह विचित्र बात है कि स्त्री जब साहित्य लिखती है तो स्त्रियों के बारे में ही लिखती है और पुरुष जब साहित्य लिखता है तब भी स्त्रियों के संबंध में ही लिखता है। दोनों में अंतर यह होता है कि स्त्री के लिखने का उद्देश्य है, अपने विषय में फैले हुए भ्रम का निराकरण करना और पुरुष का उद्देश्य है उसके विषय में ओर भी भ्रम पैदा करना।'[3] नारी को भारतीय संस्कृति के अनुरुप विचारवान एवं प्राणवान रुप में चित्रित किया गया। लेकिन समय परिवर्तन के साथ स्त्रियों को निम्न वर्ग के रूप में माना गया। उन्हें शोषित व पीड़ित बताया गया है। उसको विभिन्न मुखौटों से ढक दिया गया है।

महादेवी वर्मा ने लिखा है– 'आधुनिक नारी मनोवैज्ञानिक दृष्टि से कुण्ठित है। यदि वह शान्त भाव से अपनी समस्या पर विचार करे तो तनाव भी नहीं रहेगा। वह दो नावों पर पैर रखे है, न पुराना आडम्बर छोड़ना चाहती है, न नवीन की सहजता स्वीकार करती है।'[4] इन्होंने स्त्रियों को विद्रोह की प्रेरणा दी। वे अन्याय के प्रति सदैव असहिष्णु रही है। भारतीय नारी संस्कृति सापेक्ष रह कर समय के साथ गत्यात्मक (DYNAMIC) बने किन्तु विध्वंस करना वे नहीं सिखाती है। आशापूर्णा देवी– 'लम्बे समय तक साहित्य सृजन के दौरान ऐसा भी हुआ है कि हताशा और निराशा मिली है लेकिन मैंने इस ह्रास और पतन को जीवन का अंतिम वक्तव्य कभी नहीं माना। मैं जानती हूँ कि अतृप्ति के साथ–साथ पूर्णता प्रदान करती है।' लेखिकाओं ने नई चेतना दृष्टि से इतिहास, संस्कृति व मानवीय संबंधों को पुन: विश्लेषित किया है। इससे नारी की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक व सामाजिक छवि बदलती हुई प्रतीत होती हे। इसमें सभी वर्ग, वर्ण, धर्म, जाति व देश की स्त्रियाँ शामिल है। अंग्रेज़ी के फेनिनिज्म शब्द को हिंदी में नारी चेतना रुप दिया गया है।

लेखिका महुआ मात्री लिखती है कि 'साहित्य में इतना माद्दा है कि वह समाज को बदल सकता है। उसे समाज तक पहुँचाया जाए। जब तक वह लोगों तक नहीं पहुँचेगा, तो उसकी सोच का असर कैसे पड़ेगा। इसलिए साहित्य जन प्रिय होगा तो समाज को जरूर बदलेगा।' चंद्रकांता के अनुसार– स्त्री विमर्श को वृहत्तार अर्थो में परिभाषित करना चाहे तो वह घर, परिवार, समाज, नीति और राष्ट्रनीति में नारी की अस्मिता, अधिकार और उन अधिकारों के लिए संघर्ष चेतना से जुड़े संवाद की कल्पना है। वहाँ सामाजिक, धार्मिक अंध रूढ़ियों में दबी किसी स्त्री की आहे–कराहे ही नहीं बल्कि शोषण व्यवस्था के विरूद्ध उसका आक्रोश, विद्रोह भी है। साथ ही स्त्री की गरिमापूर्ण सशक्त छवि गढ़ने की महिमा भी।

मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों की नायिकाएँ गहरे संघर्ष एवं अंर्तद्वन्द्व में भी जीवन व परिवार में बराबर बनी रहती है। 'अपनी धरती पर खड़े होकर शिकंजों को काटने की कुव्वत मेरे उपन्यास की हर नायिका में है। संबंध कोई नहीं तोड़ती।'[5] महिला कथाकारों ने समकालीन स्थितियों में स्त्री समाज की त्रासदी और विडम्बनाओं, शोषण, सामाजिक, आर्थिक पराधीनता, परम्परागत स्त्री–पुरुष संबंध, सामंती मूल्यों के कई प्रश्नों को तीखे व साहसपूर्ण ढंग से अपनी कहानियों व उपन्यासों में व्यक्त किया है।

महिला लेखिकाओं ने दलित औरत, देहाती औरत, श्रमजीवी औरत, सांस्कृतिक उत्पीड़न, दैहिक शोषण की मार सहती औरत, आदिवासी औरत आदि का वर्णन भी किया है क्योंकि भारत में इस प्रकार की महिलाओं की स्थिति अधक दयनीय है। देश के कई राज्य स्त्रियों की खरीद–फरोख्त,

वैश्या समस्या से भी रूबरू हो रहे है।

'महिला मुद्दों पर कलम चलाने वाली डॉ. मृदुला सिन्हा का मानना है कि दुनिया छोटी हो गई है और महिला लेखन की संभावनाएँ बढ़ गई है।..... स्वयं महिलाओं का कार्य क्षेत्र भी विस्तृत हुआ है। इसलिए अपने और दूसरों के अनुभव के आधार पर लेखन में प्रवीणता आई है। विश्व बंधुत्व की कामना करने वाले भारतीय समाज के लिए वैश्वीकरण हौव्वा नहीं बनना चाहिए।'[6] वर्तमान में लेखिकाओं ने स्त्री के जमीनी संघर्ष को महसूस किया है तो साथ में सैद्धान्तिक सुत्रों की पड़ताल करते हुए इतिहास के पुनर्लेखन व साहित्य रचना के माध्यम से अपने विरोध भाव को भी दर्ज किया है। 'भाषा विधान व ज्ञानात्मक अनुशासन के इस रास्ते पर वर्ग, जाति, धर्म, प्रांत पर आधारित पहचान के कई मोड़ आते है जहाँ महिला लेखकों की मुठभेड़ सामाजिक ढाँचे एवं उस पर निर्मित पितृसत्तात्मक सांस्कृतिक आदर्शों, प्रतीकों एवं सौन्दर्य दृष्टि से होता है।'[7] पूरे विश्व की स्त्री की समस्याओं को एक ही मानते हुए लिखती है- यही स्त्री सदियों से सभ्यता के आदिकाल से पुरुष वर्ग द्वारा दलित है, शोषित है। सिमोन द बोउआ, केट मिलेट, जर्मेन ग्रीयर, बेइट्टी फ्राइडेन इत्यादि पश्चिम की नारीवादी लेखिकाएँ इस बात को अपने शोध कार्यों से स्थापित कर चुकी है कि स्त्री होना एक ऐतिहासिक घटना है। वह जन्म से स्त्री नहीं बल्कि हजारों साल की सभ्यता ने उसे वस्तु रूप में परिणत कर दिया है।' [8]

सामाजिक सरोकारों से जुड़ी डॉ. कृष्णा अग्निहोत्री का भी मानना है कि 'जब समस्या ही बाजारवाद का है तो उसे स्वीकारते हुए ही उन्हीं के बीच से हल निकालने होंगे।'[9] नारी की जागृति के साथ ही उसकी भूमिकाओं और दायित्वों में भी वृद्धि हुई है। वह एक माता और पत्नी के रूप में जितनी सशक्त है, उतनी ही एक कार्यकारी और अधिकारी के रूप में भी। स्त्री परिवार, समाज एवं देश का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होते हुए भी उसे समुचित समानता प्राय: प्रत्येक क्षेत्र में देने की आवश्यकता बनी हुई है। क्योंकि स्वतंत्रता का अर्थ नकारात्मक रूप में यानि स्वेच्छाचारिता के अर्थ में लिया जा रहा है जबकि विधायक स्वतंत्रता हमेशा होती है। कला, संगीत, सौंदर्य, साहित्य की अन्तर्वर्ती धारा की प्रेरणा और मूर्तिकरण के बावजूद नारी सदा जीवन के हाशिये पर जीती रही।

इस बारे में लिखा गया है कि 'वैसे भी अपने स्वानुभूत इतिहास के आधार पर महादेवी से लेकर कृष्णा सोबती तक हमारे वक्त के बेहतर महिला लेखन में लगातार कुछ नया स्फुटित होता रहा है। मनुष्य और पशुजगत, स्त्री और प्रकृति, माँ और बेटी के रिश्तों के संदर्भ में बहुत सारा अनुभव, भाषा के कई प्रयोग समय-समय पर इन लेखिकाओं ने प्रचलित संदर्भो से तोड़कर एकदम नए संदर्भो में रखे और परखे है, जाहिर है भाषा और भावों के ऐसे समायोजन में बहुत सारे पुराने अनुभव और भाषा रूप, या तो हटा दिए जाएँगें या नए अनुभवों से जुड़कर एकदम नई रंगत देने लगेंगे।'[10]

नोबल पुरस्कार विजेता मारिसन का मानना है कि 'नई शताब्दी की इस महिला एक बदलते हुए रूप में कुछ नए अर्थो में इस विश्व को नया रास्ता दिखाएगी और वह है जन संचार और प्रसारण-माध्यम, जैसे टी.वी., रेडियो, अखबार इत्यादि, परन्तु इनके दुष्प्रभाव भी होंगे। इस शताब्दी के शुरू में महिलाएँ अब एक बदली हुई भूमिका में विश्व को रास्ता दिखा रही है। मेरा मानना है कि यह शताब्दी महिलाओं की ही होगी।'[11]

सभी वर्ग, जाति, लिंग की स्त्रियों पर समान रूप से लागु होता यह स्त्री विमर्श उसे मानवी बनाने के लिए कृत संकल्पित है। प्राचीन पितृसत्तात्मक समाज ने स्त्री को आर्थिक, सामाजिक व वैचारिक रूप से अधीन कर रखा है। उसे मृदुभाषी, कर्मशील व सेवाभावी होना अनिवार्य बताया गया है। उसे घर-परिवार से सामाजिक समानता, पुरुषवादी अहं से मुक्ति, शिक्षा व क्षमताओं पर विश्वास, नेतृत्व क्षमता व मानवीय सरोकारों का वातावरण चाहिए। काम-काज की दुनिया में समान कार्य एवं समान वेतन में बराबरी की माँग करती दिखाई देती, वह समाज में परम्परागत नियमों को तोड़ना चाहती है। वह आत्मनिर्भरता, अधिकार व स्व निर्णय की स्थिति को प्राप्त करना चाहती है, मनचाही जिन्दगी जीना चाहती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सं.प्रकाश आतुर : *साहित्य की प्रतिबद्धता और सरोकार*, पृ. 78
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी : स्त्री प्रतिभा, *कमला पत्रिका*, अक्टू. 1939, पृ. 3
3. रेणुका नैयर : *महादेवी वर्मा(व्यक्ति भेंटवार्ता) : नारी स्वातंत्र्य के बदलते रुप*, पृ. 142
4. सृजन-विश्व, रविवारीय, *राजस्थान पत्रिका,* 28 अक्टू. 2007, पृ. 2
5. सृजन-विश्व, रविवारीय, *राजस्थान पत्रिका,* 19 अक्टू. 2008, पृ. 2
6. परिवार, *राजस्थान पत्रिका*, 31 जन. 2007
7. *राजस्थान लेखिका सम्मेलन-2012*, राजस्थान साहित्य अकादमी एवं मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्वाधान में आयोजित, 3-4 नव. 2012
8. प्रभा खेतान : *स्त्री विमर्श के अंतर्विरोध*, पृ. 358
9. सृजन-विश्व, रविवारीय, *राजस्थान पत्रिका*, जून 2008, पृ. 2
10. मृणाल पांडे : *जहाँ औरते गढ़ी जाती है*, पृ. 51
11. कमला रत्तू : भारतीय महिलाएँ एवं मीडिया क्रांति के संदर्भ में, *मधुमती(अंक-11)*, नव. 2006, पृ. 31

****